आयुर्वेद में पंचकर्म का महत्त्व

Dr. Anuradha Kumari

Faculty of Ayurveda
P.G.D.P.K. (B.H.U), B.A.M.S.

सार:- पंचकर्म आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी अंग है। आयुर्वेद के 8 अंगों में काय–चिकित्सा को प्रधान अंग माना गया है एवं पंचकर्म काय–चिकित्सा असाध्य रोगों का प्रमुख साधनोपाय है। वर्त्तमान समय में पंचकर्म चिकित्सा का अत्यधिक विस्तार हो जाने के कारण पंचकर्म एक अंग के रूप में नहीं अपितु आयुर्वेद चिकित्सा की भिन्न एवं स्वतंत्र शाखा के रूप में जाना जाता है।

संकेत शब्द:-पंचकर्म,कायचिकित्सा

वर्त्तमान समय एक व्यस्तम आधुनिक मशीनी युग बन गया है, जिसके कारण लोगों की जीवन चर्या में मूलभूत परिवर्तन हुए हैं, जिसमें आहार–सबंधी जैसे– फास्ट फूड, डिब्बाबंद भोजन, उच्च कैलोरीयुक्त भोजन करने की प्रवृति बढ़ी तथा शारीरिक श्रम एकदम अल्प हो गया है। जिसके कारण मनुष्य अनेक प्रकार की व्याधियों से ग्रस्त होते जा रहे है, जिसमें प्रमुख रूप से मोटापा, मधुमेह, उच्च–रक्तचाप, हाइपोथाईरोडिज्म, हृदय रोग आदि शामिल है। पक्षाघात, अर्दित, कटिशूल, ग्रीवाशूल, आमवात, संधिगतवात जैसी व्याधियों के साथ इम्यून–सिस्टम के रोग भी अधिक तेजी से बढ़ रहे हैं। इन सभी रोगों की भारत में बहुत तेजी से प्रगति हो रही है।

अतः वर्त्तमान समय में स्वास्थ्य के लिए स्वास्थ्यवृति की दृष्टि से शास्त्र में वर्णित ''पंचकर्म'' करना चाहिए जैसे वसंत में वमन, शरद में विरेचन तथा वर्षा में विरेचन का प्रयोग करना चाहिए।

पंचकर्म श्रेष्ठ संशोधन उपचार :–

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में चिकित्सा के दो भेद बताये गये हैं (01) शोधन चिकित्सा (02) शमन चिकित्सा। इन दोनों प्रकार की चिकित्सा विधाओं में शोधन–चिकित्सा को अधिक महत्व दिया गया है। कारण यह है कि शमन चिकित्सा से साधित रोगों का पुनः पुनः शरीर में प्रादुभार्व हो सकता है परंतु संशोधन चिकित्सा द्वारा साधित व्याधियों का शरीर से समूलनाश होने से उनका पुनः पुनरावर्तन नहीं हो पाता है।

पंचकर्म का अर्थ :–

यहाँ कर्म का अर्थ है 'काय' अर्थात् जो अभीष्ट हो उसे कर्म कहते हैं और पंचकर्म चिकित्सा में पांच कर्मों अर्थात् पांच प्रकार के शोधन कर्मों का समावेश किया जाता है – (01) वमन (02) विरेचन (03) निरूह वस्ति (04) अनुवासन वस्ति (05) नस्य।

शल्य–चिकित्सा के अंतर्गत पंचकर्म की दृष्टि से आचार्य सुश्रुत ने 'नस्य' के स्थान पर रक्तमोक्षण को माना है। अतः पंचकर्म चिकित्सा एक प्रकार की संशोधन चिकित्सा है जिसके द्वारा शरीर में वृद्ध दोषों को प्रायः कोष्ठ में लाकर उनके निकटतम मार्ग से बाहर निकाला जाता है।

पंचकर्म का प्रयोजन :–

स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य का संरक्षण हेतु रसायन–वाजीकरण प्रयोग से पूर्व पंचकर्म विधान। रोगानुसार पंचकर्म।

पंचकर्म की रूपरेखा :–

(01) पूर्व–कर्म (02) प्रधान–कर्म (03) पश्चात् कर्म। इन तीनों कर्मों के द्वारा पंचकर्म पूर्ण/सफल होता है।

पूर्व–कर्म – पंचकर्म द्वारा जिस व्यक्ति का शोधन करना होता है, उससे पूर्व जो कर्म किए जाते हैं, उन्हें पूर्व कर्म कहते है। पूर्व कर्म तीन प्रकार के होते हैं – (01). दीपन–पाचन (02). स्नेहन (03). स्वेदन

- दीपन–पाचन :– सम्यक् पाचनार्थ अग्नि को प्रदीप्त करनेवाली औषधि और आम पाचन हेतु औषधों का प्रयोग करना।
- स्नेहन :– धृत–तेल–वसा–मज्जा ये चार उत्तम स्नेह है और इन स्नेह का प्रयोग बाह्य और आभ्यन्तर दोनों प्रकार से किया जाता है। किसी को केवल स्नेह का पान कराया जाता है और किसी को भात, यूष आदि में मिलाकर स्नेह दिया जाता है।
- स्वेदन :– स्वेदन दो प्रकार से किया जाता है –
  - साग्नि में अग्नि से तपाकर स्वेदन किया जाता है।

- निरग्नि में व्यायाम कराकर गर्म कक्ष में रखकर आदि से बिना अग्नि संयोग के स्वेदन कराया जाता है।

(02) प्रधान–कर्म :–

- वमन – उर्ध्व मार्ग अर्थात् मुख मार्ग से दोषों को बाहर निकालना विशेषतः कफ प्रधान व्याधियों में वमन कराया जाता है।
- विरेचन – अद्योमार्ग अर्थात् गुदा मार्ग से दोषों को बाहर निकालना विशेषतः पित्त प्रधान व्याधियों में विरेचन कराया जाता है।
- वस्ति :– वस्ति यंत्र के द्वारा गुदा मार्ग से औषधि सिद्ध क्वाथ, स्नेह, क्षीर आदि द्रव्यों को शरीर में प्रविष्ट कराने की प्रक्रिया को वस्ति कहते है।
  - निरूह क्वाथ प्रधान तथा अनुवासन स्नेह प्रधान वस्ति है।
- नस्य :– नासा–मार्ग से औषध को शरीर में प्रविष्ट कराना नस्य कहलाता है। नस्य को उर्ध्वजत्रुगत रोगों की श्रेष्ठ चिकित्सा कहा गया है।
- रक्त मोक्षण :– दूषित रक्त का शरीर से बाहर निकालना रक्तमोक्षण कहलाता है। आचार्य सुश्रुत एवं वाग्भट्ट ने पंचकर्म के अंतर्गत समाविष्ट प्रमुख पांच शोधन कर्मों में इसकी गणना की है।

(03) पश्चात् कर्म :–

- वमन – विरेचन आदि के द्वारा शरीर का शोधन करने के पश्चात् अग्नि वृद्धि हेतु और बलवान बनाने हेतु और शरीर को प्राकृत अवस्था में लाने हेतु जो कर्म किए जाते हैं, वे पश्चात् कर्म कहलाते हैं।

पंचकर्म के गुण एवं लाभ :–

युक्तियुक्त पंचकर्म करने से मनुष्य देह में निम्न गुणों की प्राप्ति होती है :–

01. कायाग्नि तीक्ष्ण होती है।
02. व्याधियों का शमन होता है।
03. स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।
04. इन्द्रियों में प्रसन्नता उत्पन्न होती है।
05. मन, बुद्धि, वर्ण का प्रसादन होता है।
06. वृद्धावस्था देर से आती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. चरक संहिता
   क. सूत्र स्थान– अध्याय 2, 13, 14, 15, 16, 22
   ख. विमान स्थान– अध्याय 8
   ग. कल्प स्थान– अध्याय 1 से 12
   घ. सिद्धी स्थान– अध्याय 1 से 12
2. सुश्रुत संहिता
   क. सूत्र स्थान– अध्याय 13, 14, 39
   ख. चिकत्सा स्थान– अध्याय 1, 31–40
3. आयुर्वेदीय पंचकर्म विज्ञान– वैद्य हरीदास श्रीधर कस्तुरे
4. काय चिकित्सा (चतुर्थ भाग)– प्रोफेसर अजय कुमार शर्मा
5. आयुर्वेदीय पंचकर्म चिकित्सा– डॉ० गुन्जन गर्ग